एक ख़त मैकॉले के नाम

प्रियंवद

प्रियंवद हिन्दी के वरिष्ठ कथाकार हैं। इनका प्रिय विषय इतिहास है। वर्तमान में 'अकार' पत्रिका का सम्पादन करते हुए कानपुर में निवास करते हैं।

श्री मान मैकॉले साहब,

आप मुझे नहीं जानते। जानेंगे भी कैसे? आपके और मेरे बीच का फासला बहुत ज्यादा है। इसे घड़ी की सुइयों से नहीं नापा जा सकता। इस फासले में सैकड़ों मौसमों की गुजरी हुयी पालकियाँ हैं, हजारों परियों की नीदें हैं, लाखों शंख ध्वनियाँ और अज़ान के स्वर हैं। हिरन और खरगोशों की कुलाँचें हैं, चिड़ियों के चुम्बन हैं, कुचले हुए फूल हैं। टूटे सितारे और भुलाए जा चुके शब्द हैं। इन्हें नापने वाली घड़ी अभी नहीं बनी है। वैसे भी, आप मुझे क्यों जानेंगे? कहाँ आप, इस देश के भाग्य विधाता और कहाँ मैं, इस देश के एक छोटे शहर का बेहद मामूली, अनजान, अज्ञानी लड़का। आपने तो कभी सोचा ही नहीं होगा कि यहाँ की गंदी, संकरी, अंधेरी गलियों में घूमने वाला कोई लापरवाह, आवारा लड़का, कभी आपको पत्र लिखने का साहस करेगा।

मैकॉले साहब, आपसे अच्छा कौन जानता है कि इतिहास और समय, अपनी बंद मुट्ठी से जादू की तरह कुछ भी निकाल देते हैं। अक्सर ऐसा होता आया है। एक मामूली ज़ुकाम, मरहम की एक डिबिया, किसी की नाक की बनावट लाखों लोगों की जिंदगी बदल देते हैं। सन 1599 की आखरी रात के आखरी घंटों में, आपके मुल्क में भी तो यही हुआ था। रानी एलिज़बेथ की एक मोहर ने इस देश के करोड़ों लोगों की जिंदगी बदल दी थी। उस रात अकबर के हिन्दुस्तान में किसने सोचा था कि एक दिन दिल्ली के मुगल बदशाह खत्म हो जाएंगे। नवाब, पेशवा, निज़ाम, राजा खत्म हो जाएंगे। इन सबके शहर, दरबार, ज़बानें, तहज़ीब, दौलत खत्म हो जाएगी। इनकी जगह कलकत्ता, मद्रास, बम्बई और दिल्ली जैसे बड़े शहर बनेंगे।

यूनिवर्सिटी, रेल, हिल स्टेशन, बैंक, मिलें बनेंगी। लिखा हुआ कानून, सुप्रीम कोर्ट, संसद, संविधान का शासन होगा। किसी ने नहीं सोचा था मैकॉले साहब। न क्लाइव ने, न वारेन हेस्टिंग्स ने, न मीर ज़ाफ़र न जगत सेठ ने। और तो और लंदन की लीडनहॉल स्ट्रीट पर बनी ईस्ट इंडिया कम्पनी की विशाल इमारत में बैठे डाइरेक्टरों में भी किसने सोचा था? हाँ, यह सोचा था बंगाल में घूमते, बाउल गाते फ़कीरों ने। गंगा पर गुजरने वाले बजरों के मल्लाहों ने। भट्ठियों के सामने लोहा गलाते लुहारों ने। कंधों पर पालकी उठाने वाले कहारों ने, श्मशान में लाशें जलाने वाले डोमों ने, हरम की बांदियों ने। ये सब देश की नसों में खून की तरह बहते थे। पर इतिहास में ऐसे लोगों की आवाजें कभी सुनायी नहीं देतीं। वहाँ कोई इनकी बात भी नहीं करता। आपने भी कहाँ की थी? आप भी एथेन्स और रोम की महानताओं के गीत गाते रहे थे। अपने मुल्क को इनकी संतान मान कर उसकी महान सभ्यता पर इतराते रहे थे। हम सब हिन्दुस्तानियों को हिकारत से देखते रहे थे। अब आप सोच रहे होंगे मै कैसे आपके बारे में इतना जानता हूँ? क्यों आज आपको पत्र लिख रहा हूँ? रूकिए, मैं आपको शुरू से सब बताता हूँ।

> अक्सर ऐसा होता आया है। एक मामूली ज़ुकाम, मरहम की एक डिबिया, किसी की नाक की बनावट लाखों लोगों की जिंदगी बदल देते हैं। सन 1599 की आखरी रात के आखरी घंटों में, आपके मुल्क में भी तो यही हुआ था। रानी एलिज़बेथ की एक मोहर ने इस देश के करोड़ों लोगों की जिंदगी बदल दी थी। उस रात अकबर के हिन्दुस्तान में किसने सोचा था कि एक दिन दिल्ली के मुगल बदशाह खत्म हो जाएंगे। नवाब, पेशवा, निज़ाम, राजा खत्म हो जाएंगे। इन सबके शहर, दरबार, ज़बानें, तहज़ीब, दौलत खत्म हो जाएगी। इनकी जगह कलकत्ता, मद्रास, बम्बई और दिल्ली जैसे बड़े शहर बनेंगे।

वह सर्दियों की एक दोपहर थी। तेज, चमकदार धूप में खिली हुयी। दो दिन से बारिश हो रही थी। दोपहर को रूकी थी, पर गीली सड़कों, पेड़ों और दीवारों की नंगी ईंटों की दरारों में उसका गीलापन धँसा था। दोपहर में लोग सब काम छोड़ कर, धूप की सारी गर्मी और तेजी अपनी खाल में भर लेना चाहते थे। घरों की छतों पर, बालकनी, सड़क के किनारे के चबूतरों, चाय की दुकान पर पड़ी बेंचों और पार्कों में लोग बैठे थे।

जब मैं गया सुकांत बाबू अपने कमरे के बाहर वाले बरामदे में, मुँडेर से कूद कर आए धूप के टुकड़े में बैठे थे। अपनी झुर्रीदार खाल की सिकुड़नों को सेंक दे रहे थे। मेरे आने से उन पर गिरने वाली धूप रूकी थी। बेचैनी से आँखें मिचमिचा कर उन्होंने मुझे देखा था।

"कौन है.... कौन?"

"जी मैं...तुहिन" मैने झुक कर उनके पाँव छुए थे।

"कौन तुहिन?" उन्होंने माथे पर सलवटें डाल कर याद करने की कोशिश की थी।

"आपका शिष्य...याद है आपको सर...क्लास में मैंने पहले दिन पूछ लिया था कि क्या ऐसा नहीं हो सकता कि पोरस लड़ाई में जीता हो और सिकंदर हारा हो?"

"फिर?"

"आपने पूछा था 'क्यों?' मैंने कहा था इसलिए कि इतिहास तो राजा लिखता है। कोई राजा अपनी पराजय क्यों लिखेगा? उसके लिए झूठा इतिहास लिखना ज्यादा आसान है। और फिर सिकन्दर तो देव पुत्र था। उसकी पराजय कैसे लिखी जा सकती थी?

"फिर?"

"तब आपने मुझे बाद में टीचर्स रूम में मिलने को कहा था। वहाँ मेंरी पीठ थपथपायी थी और इतिहास का एक मंत्र दिया था।"

"कौन सा मंत्र?"

"इतिहास को तीसरी आँख से देखने का। आपने बताया था सिर्फ उसी आँख से ही, इतिहास के गढ़े हुए झूठ और छुपाए गए सच भी दिखते हैं। इसे हमेशा खुली रखना। इसी आँख से इतिहास और भविष्य के खामोश, अंधेरे कोनों में सिमटे जीवन दिखते हैं।"

"हाँ हाँ अब याद आया सब। तो तुम तुहिन हो" उनके चेहरे पर हँसी आ गयी।

"पर पहले धूप से हटो जरा...वह स्टूल लेकर आओ" उन्होंने कमरे के कोने में रखे स्टूल की ओर इशारा किया था। स्टूल लेकर मैं उनके पास, छाँह वाले हिस्से में बैठ गया था।

"तुम ही अक्सर मुझे रास्ते में रोक कर सवाल करते थे?"

''जी"

"याद आ रहा है सब। कितने सवाल करते थे? कहीं भी रोक लेते थे। लाइब्रेरी के बाहर, गंगा किनारे, सुबह पार्क में। और सवाल भी कितने अजीब होते थे। जहाँआरा आग से न जलती तो हिन्दुस्तान का इतिहास क्या होता? क्लाइव ने आत्महत्या के लिए जो बंदूक इस्तेमाल की थी वह ठीक होती और चल जाती, तो क्या ईस्ट इंडिया कम्पनी इतनी आसानी से हिन्दुस्तान जीत लेती? दाराशिकोह अगर लड़ाई में औरंगजेब को हरा देता, तो क्या देश

का बँटवारा नहीं होता? पर आज क्या हुआ है? क्या फिर कोई सवाल है?"

"जी"

"क्या?"

"इतिहास को कहानी की तरह कैसे लिखें?" लगा, उन्होंने जैसे सुना ही नहीं। एक हाथ की उंगलियों से दूसरे हाथ की उंगलियाँ खुजलायीं। सूखी खाल पर खून की कुछ बूँदें छलक आयीं। कुछ देर उन चमकती बूँदों को देखते रहे फिर हथेली से खून रगड़ कर बोले।

"मैकॉले को पढ़ो। देखो उसने कैसे कवि, दार्शनिक और फरिश्तों के किस्सों और गीतों को इंग्लैंड के इतिहास में मिलाया है। कैसे इतिहास के चरित्रों को नाटक का पात्र बना दिया है। उसका इतिहास पढ़ने वाला इतिहास देखने भी लगता है। पढ़ा है कभी मैकॉले को?"

"नहीं" मैं बुदबुदा कर रह गया।

"वहाँ से किताब निकालो" उन्होंने कमरे की दीवारों में बनी अलमारियों में एक की ओर इशारा किया। मैं उठा। मैंने अलमारी के पल्ले खोले।

"ऊपर से तीसरे खाने में.....बांए से पांचवी..लाल किताब"

मैने किताब निकाल ली। उनके पास लाया। उन्होंने किताब ली। गोद में रख कर, आँखें सिकोड़ कर पहले पन्ने पर पेन्सिल से लिखे पेज नम्बरों में एक नम्बर खोला।

"पढ़ो, जोर से" उन्होंने कविता के एक अंश पर उंगली रखी। मैंने ऊँची आवाज में पढ़ा।

Then out spake brave Horatius
To captain of the Gate
'To every man upon this earth
Death Cometh soon or late
And how can man die better
Than facing fearful odds
For the ashes of his fathers
And the temples of his god.'

वह आँख बन्द करके सुन रहे थे। मेरे चुप होने पर आँखें खोलीं।

"यह युद्ध है पर कैसे कविता की सधी लय में लिखा है। कितना रस भर दिया है उसने। 1857 की बगावत कुचलने के लिए इंग्लैड में लोग इसी गीत को गा कर अपने सिपाहियों में जोश भरते थे।

आगे दूसरी कविता का टुकड़ा पढ़ो"

Let no man stop to plunder
But slay and slay and slay
The gods who live for ever
Are on our side to day

"देखो....इसे पढ़ने वाला कैसे सब देखने लगता है। यही लूट और हत्या जीवन भर ईस्ट इंडिया कम्पनी का मंत्र रहा। मैकॉले कलकत्ता के कमरे में घंटों बैठा थ्यूसिडिडीज़ का लिखा इतिहास पढ़ता रहता था। वहीं से उसने सीखा कि इतिहास के सच और कहानी के रस को कैसे मिलाया जाता है। तुम उसे पढ़ो, तुम्हें रास्ता दिखेगा। पर कैसे पढ़ोगे? किताबें हैं?"

"कहीं देखूँगा"

"तुम इसे रख लो...." उन्होंने मेरे हाथ कि किताब की तरफ इशारा करके कहा। "अब यह तुम्हारे ज्यादा काम की है।"

धूप का टुकड़ा फर्श से हट कर दीवार पर पंजे जमाए चढ़ने की कोशिश कर रहा था। वह अब कमरे के अंधेरे और सीलन में आ गए थे।

"मैं अब कम्बल लपेट कर कुछ देर सोऊँगा...फिर खाना बनाने वाला आ जाएगा।"

"चलता हूँ" मैंने स्टूल वापस रख दिया। लौट कर उनके पाँव छुए। जाने लगा। दरवाजे पर पहुँचा तो उन्होंने आवाज दी। मैं रूका। वापस लौटा "मैकॉले को पढ़ते समय यह मत भूलना कि मद्रास में जहाज पर वह जिस पहले हिन्दुस्तानी को देख कर, उसके रंग और नंगेपन पर हँसता रहा था, जिंदगी भर वह हिन्दुस्तानियों को उसी तरह देख कर हँसता रहा। उसकी गलती थी कि उसने इतिहास के सिर्फ एक ओर खड़े होकर सब कुछ देखा। यह गलती मत करना। किसी भी समय में बहुत कुछ होता है। बहुत मामूली लोगों के बहुत बड़े जीवन होते हैं। उनके जीवन में ही उस समय का सच होता है। सुख-दुख होते हैं। जय-पराजय होती है। उनको छोड़ कर इतिहास नहीं बनता"

"जी"

"क्या नाम बताया था?"

"तुहिन"

"हाँ....हाँ....तुहिन। अब बहुत जल्दी भूलने लगा हूँ। तुम जब चाहो आ जाना। किताबें भी ले लेना"

"जी" मैंने फिर पैर छुए और चला आया।

उस रात मैं देर तक खाली सड़कों पर टूटे पत्तों के साथ भटकता रहा था। न जाने कितनी आकाशगंगाओं से गुजरा। न जाने कितनी उदासियों की डयोढ़ियों पर दस्तक दी। न जाने कितने चिरागों को जलते बुझते देखता रहा। सुकांत बाबू ने कहा था हर

समय में बहुत कुछ होता है। क्या हर समय में आप भी होते हैं सुकांत बाबू?

मैकॉले साहब, उनकी दी हुयी किताबें पढ़कर पता चला कि यह देश आज भी आपकी कम्पनी और आपका ऋणी है। ऐसा कम्पनी इतिहास में किसने देखी थी जो दिमाग, हथियार और अपने नौकरों की ताकत पर मुग़ल और चीन के साम्राज्यों पर भारी पड़ती चली गयी? जिसकी आमदनी अपने देश ब्रिटेन की आमदनी से ज्यादा थी? जो आपके समय में हिन्दुस्तान के पाँच लाख वर्ग मील पर शासन कर रही थी? जिसके आधीन नौ करोड़ लोग थे? इसी कम्पनी ने दुनिया को शेयर मार्केट, पूंजी, मुनाफा, बाजार, बिजनेस मैनेजमेंट जैसे शब्द दिए। यही कम्पनी आज की दुनिया के सर्वशक्तिमान कारपोरेट जगत की जननी थी । माँ थी। आज हमारा देश फिर उसी तरह इनके चरणों में झुका हुआ है। उस जगत जननी कम्पनी को मेरा, मेरे देश का प्रमाण।

मैं और मेरे देश आपके भी ऋणी हैं मैकॉले साहब। आपकी हिस्सेदारी से बनायी अंग्रेजी शिक्षा, सरकारी नौकरियों के ढांचे, भारतीय दंड संहिता और ऐसा वर्ग जो खून और रंग में हिन्दुस्तानी हो, पर अपनी सोच, राय, नैतिक मूल्यों और बुद्धि में अंग्रेज हो, इन सबने उस हिन्दुस्तान को चलाया था । आज भी आपकी दी हुयी इन्हीं चारों चीजों से यह देश चल रहा है। कुछ भी नहीं बदला है। आप आज भी इसकी नसों में बह रहे हैं। इसका जीवन प्राण हैं। सच तो यह है कि इस देश में आज सब जगह आपकी प्रतिमाएँ होनी चाहिए। कनखियों से मत घूरिए। मैं सच कह रहा हूँ मैकॉले साहब। खुद ही सोचिए, कितना विचित्र है न? 1857 की क्रान्ति करने वालों को घृणा और भयानक बदले की भावना से देखने वाले, हमारी नस्ल को धरती से मिटा देने की सोचने वाले आप, (आपके साथ श्रीमान चार्ल्स डिकेन्स भी शामिल थे।) एडिसन के पाँवों और सैमुएल जान्सन की कब्रों के पास, अपनी कब्र में लेटे हुए आज नए भारत के भाग्य विधाता बन चुके हैं। लेकिन आजादी की हमारी उस पहली लड़ाई में शामिल होने वाला आखरी मुग़ल बादशाह, अस्सी साल की उम्र में रंगून की जेल में गुमनामी में मरा। अपनी कब्र के अंधेरों में वह आज भी गुनगुनाता है।

पसे-मर्ग मेरे मज़ार पर जो दिया किसी ने जला दिया
उसे आह दामने-बाद ने, सरे-शाम ही से बुझा दिया।
मेंरी आँख झपकी थी एक पल, मेरे दिल ने चाहा कि उठके चल
दिले-बेकरार ने ओ मियाँ, वहीं चुटकी लेके जगा दिया।
मुझे दफ्न करना तू जिस घड़ी, तो ये उससे कहना कि ऐ परी
वो जो तेरा आशिके ज़ार था, तहे-खाक उसको दबा दिया।
मैंने दिल दिया, मैंने जान दी, मगर आह तूने न कद्र की
किसी बात को जो कभी कहा, उसे चुटकियों में उड़ा दिया।

उसकी बात देश में अब कोई नहीं करता। आपको मेरा, मेरे देश का प्रणाम। और देश नहीं, अकेला मैं ऋणी हूँ सुकांत बाबू का। उन्होंने इतिहास के अँधेरे, गुमनाम कोनों में छुपे सच को देखना सिखाया । इतिहास को कहानी में कहना सिखाया। आज़ादी के बहत्तर साल बाद भी आपका सदैव ऋणी और आपकी कृपा के सदैव आकांक्षी देश के एक छोटे शहर का अज्ञानी, अज्ञात हिन्दुस्तानी।